गणित शिक्षण : आगे का रास्ता

गणित सीखने-सिखाने के तरीकों को लेकर एक उलझी हुई सी बहस चल रही है भारतीय शिक्षा जगत में। अपने यहां सभी बहसें उलझी हुई सी ही चलती हैं। कुछ विचार की दुनिया में कोई साफ मत बनाने की झिझक के चलते और कुछ शब्दावली के उपयोग के अन्दाज के चलते । हमारी सनातन स्याद्-वादी मनोवृत्ति सब जगह सच्चाई देखने की हिमायती है और यह भी इसी मनोवृत्ति का परिणाम है कि हम किसी भी सच्चाई को पूरे विश्वास के साथ कहने से भी झिझकते हैं। इसलिये बहस में रखे गये विचारों की समालोचना जरा नरम होती है। जब भूले भटके किसी विचार की समालोचना साफ और कड़ी हो जाती है तो पूर्व पक्ष या तो उसे बदल देता है (मेरे कहने का आशय ऐसा नहीं था ...) या फिर बहस सीधी विचार की दुनिया से निकल कर भावना की दुनिया में चली जाती है। इसलिये विचार हमेशा की अर्ध-परिभाषित, बे-जांचे और धुंधले घूमते रहते हैं। गणित पर बहस का भी यही हाल है।

कुछ लोग गणित को अभ्यास का शास्त्र मानते हैं और पारंपरिक अभ्यास आधारित तरीके से शिक्षण के हिमायती हैं। कुछ दूसरे लोग इसे विज्ञान जैसा एक शास्त्र (शास्त्र = discipline, ज्ञानानुशासन) मानते हैं, जिसे सीखने में अनुभव और प्रयोग की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। एक तीसरी तरह के लोग गणित को तर्क आधारित अमूर्त शाास्त्र मानते हैं और इनके लिये गणित सीखने में चितंन और शिक्षक का मार्गदर्शन बहुत महत्वपूर्ण है। और इन मान्यताओं के अलग-अलग अनुपातों में मिलने से और भी बहुत तरह के विचार गणित शिक्षण में मौजूद है।

पारंपरिक अभ्यास केन्द्रित धारा विचार पर कम और प्रक्रिया पर ज्यादा आधारित है । कक्षाओं में गणित की पढ़ाई अब भी आमतौर पर इसी तरीके से होती है। बच्चों के सीखने में 'याद करने' और 'सही विधि' के अभ्यास करने पर ही जोर रहता है। गिनती करना, गिनती लिखना, संक्रियाएं करना, आदि सभी बिना किसी तरह के तर्क और कारण बताये या तो अभ्यास से करवाये जाते हैं या फिर एक क्रिया विधान के रूप में पेश किये जाते हैं। शिक्षक दर्जनों नियमों (जैसे - टूटे भाग की सिफर), याद रखने के नुस्खों (कोष्ठक खोलने का नियम BODMAS बहुत जाना-माना उदाहरण हो सकता है) और रटाई के लिये तुकबन्दियों का इस्तेमाल करते हैं। इन दिनों आनन्ददायी शिक्षा के नाम पर गणित को गीत से सिखाने वाले गुर बहुत प्रसिद्ध हुये हैं। ये सभी अभ्यास केन्द्रित शिक्षण धारा के उदाहरण हैं ।

इस धारा में गणित को एक उपकरण की तरह देखा जाता है। उपकरण को समझने में कोई तुक नहीं होती, उसे तो काम में लेना आना चाहिए। इसी तरह ब्याज की गणना करने के तरीकों को समझने में कोई तुक नहीं मानी जाती, बस ब्याज की गणना का तरीका आना चाहिये। ऐसा भी कह सकते हैं कि गणित सूत्रों का शास्त्र माना जाता है। सूत्र याद करने की और सही जगह लगाने की चीज है समझने की नहीं । सूत्र लगाने की सही जगह वही है जो शिक्षक ने बतायी है। आम तौर पर इस धारा के लोगों के लिए गणित वैसा ही ज्ञान है, जैसा फलित ज्योतिष (astrology)। फलित ज्योतिष में ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति का लोगों के जीवन पर असर बताया जाता है। क्या तार्किक कारण हैं, आदि-आदि में पड़ने की कोई जरूरत नहीं मानी जाती । ज्योतिष का तर्क यही है कि 'हमारे ज्ञानी पुरखों ने चिंतन-मनन करके ये ज्ञान प्राप्त किया है, तो यह गलत थोड़े ही होगा ?' इसी तरह 'टूटे भाग की सिफर' लगती है । इसे लगाओ तो भाग सही और ना लगाओ तो गलत। क्यों लगती है ? आदि के चक्कर में पड़ने का कोई अर्थ नहीं। गणितज्ञों ने यह तरीके निकाले हैं और ये काम सही करते हैं, बस।

इस धारा के शिक्षण में जितने ज्यादा गणितीय तथ्य रटवाये जा सकें उतना ही अच्छा है। इस विधि की ताकत सरल और पहले अभ्यास किये हुये सवालों में शीघ्र गणना के रूप में उजागर होती है। इसके नुकसान गणित सीखने की काबलियत के खत्म होने में और गणित शास्त्र को अटकलबाजी में बदलने के रूप में सामने आता है। अधिकतर कक्षाओं में गणित आज भी इसी विधि से पढ़ाई जाती है, पर बहस और विचार-विमर्श में गणित पढ़ाने के इस तरीके की और गणित के बारे में इन विचारों की तरफदारी कोई नहीं करता। बात यह नहीं है कि लोग जानबूझ कर अपने विचार छुपाते हैं । बल्कि बात यह है कि इस विधि की कमियां तो सब जान गये लगते हैं पर कोई वैकल्पिक समझ गणित को देखने की और पढ़ाने की बहुत लोगों तक नहीं पहुंच पाई है । व्यवहार के स्तर से इस विधि को तभी हटाया जा सकेगा, जब विचार के स्तर पर गणित और गणित शिक्षण की वैकल्पिक समझ शिक्षक के पास पहुंचेगी। अब शिक्षा के क्षेत्र में यह बात आम तौर पर मानी जाने लगी है कि प्रचलित तरीकों को और विचारधाराओं को केवल अप्रभावी और असत्य सिद्ध करके नहीं बदला जा सकता है । बल्कि उन्हें बदलने के लिये वैकल्पिक तरीके और विचार भी प्रस्तावित करने होते हैं । जरूरी है कि ये वैकल्पिक तरीके और विचार, जिन्हें बदलना चाहते हैं, उनसे बेहतर होने चाहिये, तभी कुछ बदल सकता है।

जो तरीके पारम्परिक विधि के विकल्प के रूप में प्रचारित हुए हैं, वे ना तो वैचारिक / सैद्धान्तिक दृष्टि से मजबूत जमीन पर खड़े हैं और ना ही व्यावहारिक दृष्टि से बेहतर सिखा पाने में सफल हो रहे हैं। उदाहरण के लिये इन तरीकों के एक खास प्रकार - प्रयोगवादी तरीके - को लेते हैं । आजकल गणित शिक्षण के उपकरणों की बहुत बात होती है, यहां तक कि गणित की प्रयोगशाला की भी बात होती है। कुछ समय पहले देश के सबसे प्रतिष्ठित शिक्षा बोर्ड ने भी गणित-प्रयोग शालाओं की सिफारिश की थी। इस लहर के चलते बहुत से गणितीय उपकरण बन गये हैं और शिक्षकों से और उपकरण डिजाइन करने को भी कहा जाता है। उदाहरण के लिए कुछ दिन पहले मैंने पायथोगोरस की प्रसिद्ध प्रमेय को 'सिखाने' और 'सिद्ध करने' के लिये एक उपकरण की तस्वीर देखी। पायथोगोरस प्रमेय कहती है कि 'किसी भी समकोण त्रिभुज के विकर्ण पर बने वर्ग का क्षेत्रफल उस की बाकी दोनों भुजाओं पर बने वर्गों के क्षेत्रफल के योग के बराबर होता है।' इस प्रमेय को सिद्ध करने के एक से अधिक और बहुत मजेदार तरीके उपलब्ध हैं, सब अवधारणाओं के स्तर पर विचार करते हुए। शिक्षिका ने जो उपकरण या शिक्षण सामग्री इस प्रयोग को सिखाने के लिये काम में लेने की सलाह दी उस की तस्वीर नीचे दी हुई है ।

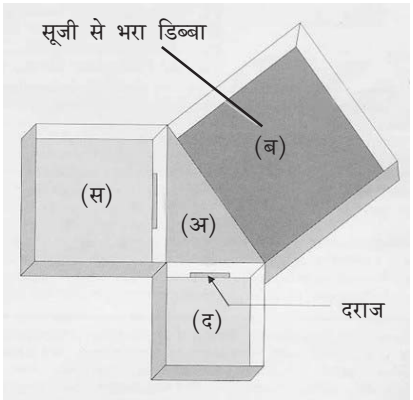

इसके उपयोग का तरीका यह बताया है कि विकर्ण पर बने बड़े डिब्बे में (ब) में सूजी भर दें। फिर इस सारे उपकरण को इस तरह टेढ़ा करें कि सूजी बड़े डिब्बे के त्रिकोण वाली दीवार में बने छेद से त्रिकोण में आ जाये और वहां से दोनों छोटे डिब्बों स और द में चली जाये।

शिक्षिका का मानना है कि यदि बड़े डिब्बे को सूजी से पूरा भर कर यह प्रक्रिया करें तो उसी सूजी से दोनों छोटे डिब्बे पूरे पूरे भर जायेंगे। और इससे पायथोगोरस प्रमेय आनन्द वाली विधि से समझ में आ जायेगी।

यह गणित के उपकरणों के माध्यम से सीखने की कोशिश का शायद सबसे खराब उदाहरण है। इसमें तथाकथित 'गणित में प्रयोग विधि' की सारी खामियां एक साथ पायी जाती है। सैद्धांतिक भी और व्यवहारिक भी। यहां इस पर विचार इसीलिए कर रहे हैं कि सारी समस्याओं को एक साथ देख सकें। बात को ठीक से समझने के लिए इस पर थोड़ा सा ठहरकर विचार करना होगा।

पहले अवधारणा के स्तर पर देखते हैं। पायथोगोरस प्रमेय में त्रिकोण की भुजाओं पर बने वर्गों के क्षेत्रफल की

बात की जाती है। सिखाने की इस विधि में क्षेत्र की बात नहीं है। वर्गों को आधार मानकर बनाये गये समान ऊंचाई के घनाभों की धारिता की बात हो रही है। इससे यदि कुछ सिद्ध होता तो भी वह क्षेत्रफल नहीं धारिता के बारे में होता। धारिता की धारणा क्षेत्र की धारणा से अधिक जटिल होती है, कम जटिल नहीं। तो पहले अधिक जटिल प्रमेय को सिद्ध करके फिर उसके माध्यम से सरल प्रमेय पर जा रहे हैं। गणित में कभी-कभी ऐसा होता तो है, पर यह गणित सिखाने की उल्टी रीत होगी यदि सरल प्रमेय को सिद्ध करने के तरीके पहले ही मालूम हों।

दूसरी बात यह है कि पायथोगोरस प्रमेय विद्यार्थियों को नवीं कक्षा के आसपास पढ़ाई जाती है तब तक बच्चे पियाजे के शब्दों में 'फार्मल ऑपरेशन' के स्तर पर पहुंच चुके होते हैं अर्थात वे अमूर्त धारणाओं और तार्किक संबंधों को समझने लगते हैं। पायथोगोरस प्रमेय से पहले रेखा गणित की बहुत सी प्रमेय पढ़ाई जाती हैं। रेखा गणित की धारणाएं - बिन्दु, रेखा, वर्ग आदि और बहुत सी परिभाषाएं सिखाई जा चुकी होती हैं। गणित में किसी कथन को सही सिद्ध करने के तरीके - उपपत्ति - का काफी अभ्यास बच्चे कर चुके होते हैं । फिर भी यदि यह माना जाए कि उनके पास पायथोगोरस प्रमेय में कही गई बात की कल्पना करने के लिये अनुभव और अवधारणायें नहीं हैं, तो अभी तक की पढ़ाई सारी गणित को उस बच्चे के लिए बेमानी मानना पड़ेगा। कहने का मतलब यह है कि मानसिक विकास के जिस चरण में पायथोगोरस प्रमेय पढ़ाई जाती है, उस जगह ऐसे उपकरणों की कोई सार्थकता है ही नहीं।

यह कहा जा सकता है कि नवीं कक्षा में नहीं, पर बच्चों को कम उम्र में - तीसरी या चौथी में - पायथोगोरस प्रमेय का आशय समझाने के लिये ऐसा उपकरण काम में लिया जा सकता है। ठीक है, खिलौने के रूप में यदि बच्चे डिब्बों में सूजी या मिट्टी भरकर उलट पुलट करते हैं तो यह अच्छा ही अनुभव होगा। पर इसका गणित से कोई लेना देना पायथोगोरस प्रमेय के संदर्भ में तो कम ही होगा। तीसरी-चौथी कक्षा में बच्चा इतने जटिल विचार को समझने के लिए तैयार ही नहीं होता।

ये सब इस उपकरण से संबंधित सैद्धांतिक परेशानियां है। व्यावहारिक परेशानी यह है कि सूजी एक डिब्बे से दूसरे में इतनी सफाई से कभी जायेगी ही नहीं की उससे कुछ सिद्ध भी हो सके।

आखिरी बात यह है कि गणित में उपकरणों से करके दिखाने से कुछ भी सिद्ध नहीं होता। इस बात पर यहां ज्यादा समय नहीं लगायेंगे। इसी अंक के अन्य कई लेखों में इस मसले को उठाया गया है। यहां मेरा इरादा इस उपकरण के बारे में कुछ कहने का नही है। मैं इस उदाहरण से यह कहना चाहता हूँ, कि गणित-प्रयोगशाला के ज्यादातर विचार और 'प्रयोग' इसी तरह के हैं। उनसे गणित को जटिल तो बनाया जा सकता है - पर सिद्ध कुछ भी नहीं होता। हां, गणित के बारे में यह गलत धारणा जरूर बनती है कि इसे भी विज्ञान की तरह प्रयोग करके सीखा जा सकता है।

तो क्या गणित में किसी तरह के उपकरणों की जरूरत नहीं है ? क्या अनुभव का गणित के ज्ञान में कोई योगदान नहीं होता ? इन सवालों पर इस अंक के कई लेखों में विचार किया गया है । यही इस अंक के प्रमुख सवाल हैं : गणित में ज्ञान की प्रकृति क्या होती है ? गणित और अनुभव का क्या रिश्ता है ?

पर यहां इतना तो कहना ही चाहिये सारा ही मानवीय ज्ञान अनुभव पर आधारित होता है, गणित भी इस बात का अपवाद नहीं है। पर अनुभव के अमूर्तिकरण और तार्किक व्यवस्था के माध्यम से गणित का जो ज्ञान बनता है वह प्रयोगों के द्वारा न तो सीखा जा सकता है, ना खोजा जाता है और ना ही सही-गलत साबित किया जाता है। हम यदि गणित के शिक्षण को बदलना चाहते हैं तो हमें एक सुसंगत शिक्षण विधा का विकास करना होगा। जो सिद्धांत के स्तर पर पुख्ता हो और व्यवहार के स्तर पर कारगर हो । इस अंक में इसी रास्ते पर चलने के लिए कुछ शुरूआती सामग्री प्रस्तुत कर रहे हैं। ◆

रोहित धनकर